

"आरक्षित वर्गों का उप-वर्गीकरण: भारत में सामाजिक न्याय के लिए राजनीतिक और न्यायिक निहितार्थों का आकलन"

डॉ. अभिषेक यादव, पीएचडी, राजनीति विज्ञान विभाग, दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र भारतीय संविधान के तहत अनुसूचित जातियों (SC) के भीतर उप-वर्गीकरण (Sub-classification) की उभरती मांग और हालिया न्यायिक व्याख्याओं का गहन विश्लेषण करता है। ऐतिहासिक रूप से, अनुसूचित जातियों को एक 'समरूप समूह' (Homogeneous Group) माना गया है, किंतु समय के साथ इस श्रेणी के भीतर सामाजिक-आर्थिक विषमताएँ उजागर हुई हैं। सर्वोच्च न्यायालय के अगस्त 2024 के ऐतिहासिक निर्णय के आलोक में, यह शोध पत्र 'कोटा के भीतर कोटा' की संवैधानिक वैधता, 'क्रीमी लेयर' के समावेश की चुनौतियों और इसके संभावित राजनीतिक प्रभावों की पड़ताल करता है। शोध का मुख्य तर्क यह है कि सामाजिक न्याय को केवल 'औपचारिक समानता' तक सीमित नहीं रखा जा सकता; इसे 'तात्विक समानता' (Substantive Equality) की प्राप्ति के लिए गतिशील और डेटा-आधारित होना चाहिए। निष्कर्षतः, यह पत्र सुझाव देता है कि उप-वर्गीकरण को केवल राजनीतिक औजार के रूप में नहीं, बल्कि हाशिए पर खड़े 'अंतिम व्यक्ति' के सशक्तीकरण के रूप में देखा जाना चाहिए, बशर्ते इसे पारदर्शी आनुभविक डेटा (Empirical Data) के आधार पर लागू किया जाए।

मुख्य शब्द (Keywords): सामाजिक न्याय, उप-वर्गीकरण, अनुसूचित जाति, सर्वोच्च न्यायालय, तात्विक समानता, क्रीमी लेयर, कोटा के भीतर कोटा, अनुच्छेद 341, अनुच्छेद 14, वितरणत्मक न्याय।

प्रस्तावना (Introduction):- भारतीय संवैधानिक लोकतंत्र में 'सामाजिक न्याय' केवल एक वैधानिक प्रावधान नहीं, बल्कि एक नैतिक अधिदेश (Moral Imperative) है, जिसका उद्देश्य सदियों से चली आ रही श्रेणीबद्ध असमानता (Graded Inequality) को समाप्त करना है। आरक्षण की नीति, जिसे 'सकारात्मक कार्रवाई' (Affirmative Action) के रूप में अपनाया गया, मूलतः इस विचार पर आधारित थी कि ऐतिहासिक रूप से वंचित समूहों को मुख्यधारा में लाने के लिए विशेष सुरक्षा प्रदान की जाए। हालाँकि, सात दशकों के क्रियान्वयन के उपरांत, आरक्षित श्रेणियों—विशेष रूप से अनुसूचित जातियों (SC) और अनुसूचित जनजातियों (ST)—के भीतर आंतरिक स्तरीकरण और 'अपेक्षाकृत अधिक उन्नत समूहों' के उदय ने एक नई बौद्धिक और न्यायिक बहस को जन्म दिया है।

हाल ही में, 1 अगस्त 2024 को माननीय उच्चतम न्यायालय की सात न्यायाधीशों की संवैधानिक पीठ द्वारा 'स्टेट ऑफ पंजाब बनाम दविंदर सिंह' मामले में दिया गया ऐतिहासिक निर्णय इस विमर्श का केंद्र बिंदु है। इस निर्णय ने 2004 के 'ई.वी. चिन्नेया बनाम आंध्र प्रदेश राज्य' के उस सिद्धांत को उलट दिया, जिसमें अनुसूचित जातियों को एक 'समांग इकाई' (Homogeneous Class) माना गया था। न्यायालय के वर्तमान रुख ने यह स्पष्ट कर दिया है कि आरक्षित वर्गों के भीतर भी 'समानों के बीच असमानता' विद्यमान है, जिसे दूर करने के लिए राज्यों द्वारा 'उप-वर्गीकरण' (Sub-categorization) करना न केवल संवैधानिक रूप से वैध है, बल्कि सामाजिक न्याय की पूर्णता के लिए अनिवार्य भी है।

प्रस्तुत शोध पत्र इस परिवर्तनकारी न्यायिक दृष्टिकोण का आलोचनात्मक विश्लेषण करता है। यह इस मौलिक प्रश्न का अन्वेषण करता है कि क्या उप-वर्गीकरण का यह सिद्धांत आरक्षण के मूल ढाँचे को सुदृढ़ करेगा या यह पहचान की राजनीति (Identity Politics) के एक नए विखंडन का कारण बनेगा। शोध पत्र में इस बात पर विशेष बल दिया गया है कि 'क्रीमी लेयर' और 'आनुपातिक प्रतिनिधित्व' जैसे जटिल संप्रत्यय किस प्रकार दलित राजनीति के भविष्य और राज्यों की नीति-निर्धारण शक्ति को प्रभावित करेंगे। अंततः, यह अध्ययन यह समझने का प्रयास करता है कि क्या उप-वर्गीकरण 'अंतिम व्यक्ति' (The Last Man) तक न्याय पहुँचाने का एक प्रभावी उपकरण सिद्ध हो सकता है या यह मात्र राजनीतिक लाभ के लिए किया गया एक प्रशासनिक पुनर्गठन है।

न्यायिक यात्रा: ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य (Judicial Journey: Historical Perspective):- भारतीय न्यायपालिका में अनुसूचित जातियों के उप-वर्गीकरण का मुद्दा 'समानता के अधिकार' (अनुच्छेद 14-16)

और 'राष्ट्रपति की शक्ति' (अनुच्छेद 341) के बीच एक जटिल संवैधानिक द्वंद्व रहा है। इस न्यायिक यात्रा को तीन प्रमुख चरणों में विभाजित किया जा सकता है:

1. इंद्र साहनी (1992) और प्रारंभिक आधार (The Foundation):- न्यायिक विमर्श की शुरुआत ऐतिहासिक इंद्र साहनी बनाम भारत संघ (1992) मामले से होती है। यद्यपि यह मामला मुख्य रूप से अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) से संबंधित था, लेकिन नौ न्यायाधीशों की पीठ ने स्पष्ट किया कि पिछड़े वर्गों के भीतर 'पिछड़े' और 'अधिक पिछड़े' का वर्गीकरण किया जा सकता है। हालांकि, उस समय अनुसूचित जातियों (SC) को एक 'एकल समांग इकाई' (Single Homogeneous Unit) माना गया और उनके भीतर किसी भी प्रकार के वर्गीकरण को वर्जित रखा गया।

2. ई.वी. चिन्नैया (2004): 'समांगता' का कठोर सिद्धांत (The Monolith Theory):- उप-वर्गीकरण के मुद्दे पर पहला निर्णायक मोड़ ई.वी. चिन्नैया बनाम आंध्र प्रदेश राज्य (2004) मामले में आया। पाँच न्यायाधीशों की संवैधानिक पीठ ने आंध्र प्रदेश के उस कानून को असंवैधानिक घोषित कर दिया, जिसने अनुसूचित जातियों को चार समूहों (A, B, C, D) में विभाजित किया था। न्यायालय ने दो मुख्य तर्क दिए:

(a). **अनुच्छेद 341 की अनन्यता:** SC सूची राष्ट्रपति द्वारा तैयार की जाती है और इसमें परिवर्तन का अधिकार केवल संसद को है। राज्य इसमें उप-वर्गीकरण करके संसद के अधिकार क्षेत्र का अतिक्रमण नहीं कर सकते।

(b). **अविभाज्य इकाई:** एक बार जब किसी जाति को राष्ट्रपति की सूची में शामिल कर लिया जाता है, तो वह एक 'वर्ग' बन जाती है जिसे दोबारा विभाजित नहीं किया जा सकता।

3. दविंदर सिंह (2020) से ऐतिहासिक फैसला (2024): वैचारिक परिवर्तन (The Paradigm Shift) - चिन्नैया के फैसले ने दो दशकों तक राज्यों की शक्ति को सीमित रखा, लेकिन इसके सामाजिक परिणामों (जहाँ कुछ जातियों ने लाभ पर एकाधिकार कर लिया) ने न्यायपालिका को पुनर्विचार पर मजबूर किया।

a) 2020 का संदर्भ: पाँच जजों की बेंच ने दविंदर सिंह बनाम पंजाब राज्य मामले में महसूस किया कि 'चिन्नैया' का फैसला गलत था और इसे सात जजों की बड़ी बेंच के पास भेज दिया।

b) 1 अगस्त 2024 का ऐतिहासिक निर्णय: मुख्य न्यायाधीश डी.वाई. चंद्रचूड़ की अध्यक्षता वाली सात न्यायाधीशों की बेंच ने 6:1 के बहुमत से 'चिन्नैया' के फैसले को पलट दिया।

c) न्यायालय ने व्यवस्था दी कि: वर्गीकरण बनाम विलोपन: उप-वर्गीकरण करने से कोई जाति सूची से बाहर नहीं होती, इसलिए यह अनुच्छेद 341 का उल्लंघन नहीं है।

d) समानता का गतिशील रूप: वास्तविक समानता के लिए यह आवश्यक है कि जो समूह सबसे पीछे रह गए हैं, उन्हें प्राथमिकता मिले। न्यायालय ने माना कि SC समुदाय ऐतिहासिक और सामाजिक रूप से एक समान (Homogeneous) नहीं हैं।

4. 'क्रीमी लेयर' का नया आयाम (The Emergence of Creamy Layer):- 2024 के फैसले की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह रही कि सात में से चार न्यायाधीशों ने अनुसूचित जातियों और जनजातियों के भीतर भी 'क्रीमी लेयर' (मलाईदार परत) की पहचान करने और उन्हें आरक्षण के लाभ से बाहर रखने का सुझाव दिया। यह भारतीय न्यायिक इतिहास में एक 'वाटरशेड मोमेंट' है, जो आरक्षण के भविष्य की दिशा तय करेगा।

राजनीतिक निहितार्थ (Political Implications):- अनुसूचित जातियों (SC) के उप-वर्गीकरण पर सर्वोच्च न्यायालय का हालिया निर्णय भारतीय चुनावी राजनीति और शक्ति-समीकरणों में एक 'पैराडाइम शिफ्ट' (Paradigm Shift) लाने वाला है। इसके राजनीतिक निहितार्थों को निम्नलिखित उप-शीर्षकों के अंतर्गत समझा जा सकता है:

1. दलित वोट बैंक का विखंडन और 'अति-दलित' राजनीति (Fragmentation of Dalit Vote Bank):- दशकों तक, दलित राजनीति एक 'एकीकृत ब्लॉक' (Monolithic Block) के रूप में संचालित होती रही है। हालाँकि, उप-वर्गीकरण इस बड़े ब्लॉक के भीतर नई राजनीतिक दरारें पैदा करेगा।

- रणनीतिक बदलाव: राष्ट्रीय और क्षेत्रीय दल अब उस 'अति-दलित' या 'पिछड़ी दलित' आबादी को लक्षित करेंगे, जो महसूस करती है कि आरक्षण का अधिकांश लाभ कुछ प्रभावी उप-जातियों (जैसे उत्तर प्रदेश में जाटव या आंध्र में माला) ने ले लिया है।
- उदाहरण: उत्तर प्रदेश में भाजपा द्वारा 'गैर-जाटव' समूहों (पासी, कोरी, खटीक, वाल्मीकि) को लामबंद करने की रणनीति इस निर्णय के बाद और अधिक संस्थागत और प्रभावी हो जाएगी।
- 2. **क्षेत्रीय दलों और पहचान आधारित राजनीति के लिए चुनौती (Challenge to Regional & Identity Parties):-** बहुजन समाज पार्टी (BSP) जैसी पार्टियाँ, जिनकी नींव 'दलित एकजुटता' पर टिकी है, उनके लिए यह निर्णय एक अस्तित्वगत संकट पैदा कर सकता है।
 1. जब उप-जातियाँ अपने विशिष्ट हितों के लिए अलग-अलग राजनीतिक सौदेबाजी (Bargaining) शुरू करेंगी, तो 'बहुजन एकता' का साझा नैरेटिव कमजोर होगा।
 2. यह क्षेत्रीय क्षेत्रों को अपनी चुनावी रणनीति में उप-जातिवार भागीदारी (Sub-caste Representation) सुनिश्चित करने के लिए मजबूर करेगा।
 3. **राज्य सरकारों की शक्ति और चुनावी लोकलुभावनवाद (State Power & Electoral Populism):-** न्यायालय ने राज्यों को उप-वर्गीकरण का अधिकार देकर उन्हें एक शक्तिशाली राजनीतिक हथियार सौंप दिया है।
 - a) चुनावी लाभ: अब राज्य सरकारें चुनाव से ठीक पहले किसी विशिष्ट उप-जाति को रिझाने के लिए आरक्षण के भीतर अलग कोटा (Quota within Quota) घोषित कर सकती हैं। यह कदम 'वोट-कैचिंग' मशीनरी के रूप में कार्य करेगा।
 - b) संघीय राजनीति: पंजाब, हरियाणा, तमिलनाडु और तेलंगाना जैसे राज्य, जिन्होंने पहले भी उप-वर्गीकरण की कोशिश की थी, अब केंद्र पर निर्भर रहे बिना अपनी सामाजिक-राजनीतिक परिस्थितियों के अनुसार कोटे का पुनर्गठन कर सकेंगे।
 4. **आंतरिक संघर्ष और अंतर-जातीय प्रतिद्वंद्विता (Intra-Dalit Rivalry and Conflict):-** उप-वर्गीकरण के राजनीतिकरण से दलित समुदायों के भीतर ही एक-दूसरे के प्रति प्रतिस्पर्धा और प्रतिद्वंद्विता बढ़ेगी।
 - a) प्रभावी दलित उप-जातियाँ, जो वर्तमान में नौकरशाही और राजनीति में बेहतर स्थिति में हैं, इस निर्णय का विरोध करेंगी (जैसा कि हमने हालिया भारत बंद के दौरान देखा)।
 - b) यह संघर्ष राजनीतिक दलों को 'पक्ष' चुनने के लिए मजबूर करेगा, जिससे सामाजिक ध्रुवीकरण की स्थिति पैदा हो सकती है।
 5. **'क्रीमी लेयर' और मध्यम वर्ग का राजनीतिक प्रभाव (Political Impact of the 'Creamy Layer' Discourse):-** न्यायालय द्वारा SC/ST के लिए 'क्रीमी लेयर' का सुझाव राजनीतिक रूप से सबसे अधिक संवेदनशील मुद्दा है।
 - a) कोई भी राजनीतिक दल खुले तौर पर इसका समर्थन करने का साहस नहीं जुटा पा रहा है क्योंकि दलित मध्यम वर्ग और सरकारी कर्मचारी संघ एक मजबूत 'प्रेसर ग्रुप' (Pressure Group) के रूप में कार्य करते हैं।
 - b) भविष्य में, क्रीमी लेयर को लागू करना या न करना एक बड़ा चुनावी मुद्दा बनेगा, जो शहरी बनाम ग्रामीण दलित विमर्श को जन्म दे सकता है।
 6. **विचारधारा का नया स्वरूप: डॉ. अंबेडकर बनाम व्यावहारिक राजनीति (The New Ideological Shift):-** राजनीतिक दल अब डॉ. अंबेडकर के 'एकजुट दलित समाज' के विचार को अपनी सुविधानुसार व्याख्यायित करेंगे। जहाँ एक पक्ष इसे 'अंतिम छोर के व्यक्ति' का उत्थान बताएगा, वहीं दूसरा पक्ष इसे 'फूट डालो और राज करो' की राजनीति करार देगा। यह वैचारिक द्वंद्व आने वाले वर्षों में भारतीय राजनीति के केंद्र में रहेगा।

सामाजिक न्याय का पुनर्मूल्यांकन (Re-assessing Social Justice):- सामाजिक न्याय का पारंपरिक भारतीय मॉडल मुख्य रूप से 'समूह पहचान' (Group Identity) पर आधारित रहा है। लेकिन अनुसूचित

जातियों के भीतर उप-वर्गीकरण की मांग ने इस अवधारणा के पुनर्मूल्यांकन को अनिवार्य बना दिया है। यह पुनर्मूल्यांकन निम्नलिखित स्तंभों पर आधारित है:

- 1) **औपचारिक समानता बनाम तात्विक समानता (Formal vs. Substantive Equality):-** अब तक सामाजिक न्याय को 'औपचारिक समानता' के चश्मे से देखा जाता था—अर्थात पूरी SC श्रेणी को एक समान मानकर आरक्षण देना। लेकिन पुनर्मूल्यांकन यह तर्क देता है कि:
 - असमानों के बीच समानता अन्याय है: यदि एक ही श्रेणी के भीतर कुछ जातियाँ (जैसे चमार या जाटव) शैक्षिक और आर्थिक रूप से आगे निकल गई हैं और कुछ (जैसे वाल्मीकि या मदिगा) अभी भी हाशिए पर हैं, तो उन्हें एक ही तराजू में तौलना 'तात्विक समानता' (Substantive Equality) के सिद्धांत के विरुद्ध है।
 - न्यायालय के अनुसार, सामाजिक न्याय का अर्थ केवल "अवसर देना" नहीं, बल्कि यह सुनिश्चित करना है कि अवसर उन तक पहुँचे जो सबसे पीछे हैं।
- 2) **वितरणात्मक न्याय की अवधारणा (Concept of Distributive Justice):-** सामाजिक न्याय का नया विमर्श 'वितरणात्मक न्याय' पर केंद्रित है। इसका अर्थ है कि राज्य के संसाधनों और लाभों का वितरण इस प्रकार हो कि वह समाज के 'अंतिम व्यक्ति' (The Last Man) तक पहुँचे।
 - उप-वर्गीकरण यह स्वीकार करता है कि SC श्रेणी के भीतर भी एक 'आंतरिक पदानुक्रम' (Internal Hierarchy) मौजूद है।
 - पुनर्मूल्यांकन इस बात पर जोर देता है कि सामाजिक न्याय 'स्थिर' (Static) नहीं हो सकता; इसे बदलते हुए सामाजिक-आर्थिक आंकड़ों के आधार पर खुद को संशोधित करना चाहिए।
- 3) **पहचान का विलोपन बनाम आंतरिक सशक्तीकरण (Erasure of Identity vs. Internal Empowerment):-** आलोचकों का तर्क है कि उप-वर्गीकरण दलित पहचान को खंडित करता है। लेकिन सामाजिक न्याय का पुनर्मूल्यांकन इसे 'खंडन' के बजाय 'सूक्ष्म-सशक्तीकरण' (Micro-Empowerment) के रूप में देखता है।
 - यह हाशिए पर पड़ी उप-जातियों को अपनी विशिष्ट पहचान और राजनीतिक आवाज़ देने का अवसर है।
 - सामाजिक न्याय अब केवल 'अस्पृश्यता' के ऐतिहासिक बोझ से ही नहीं, बल्कि 'वर्तमान वंचना' (Contemporary Deprivation) से भी परिभाषित हो रहा है।
- 4) **'क्रीमी लेयर' और सामाजिक न्याय का नया मापदंड:-** सामाजिक न्याय के पुनर्मूल्यांकन में 'क्रीमी लेयर' का समावेश एक विवादास्पद लेकिन गंभीर मुद्दा है।
 - क्या आरक्षण केवल जन्म पर आधारित होना चाहिए या इसमें पीढ़ीगत प्रगति को भी स्थान मिलना चाहिए?
 - न्यायालय का तर्क है कि यदि एक परिवार की तीन पीढ़ियाँ आरक्षण का लाभ लेकर उच्च पदों पर पहुँच चुकी हैं, तो उन्हें उसी श्रेणी के अत्यंत पिछड़े परिवार के साथ प्रतिस्पर्धा नहीं करनी चाहिए। यह विचार सामाजिक न्याय को 'गतिशील' (Dynamic) बनाने की वकालत करता है।
- 5) **अम्बेडकरवादी विमर्श का विस्तार:-** डॉ. अम्बेडकर का अंतिम लक्ष्य 'जाति का विनाश' (Annihilation of Caste) था। सामाजिक न्याय का पुनर्मूल्यांकन यह प्रश्न उठाता है कि क्या जातियों का एक बड़ा 'ब्लॉक' बनाना इस लक्ष्य में सहायक है, या जातियों के भीतर की असमानताओं को दूर करके उन्हें मुख्यधारा में लाना अधिक प्रभावी है? उप-वर्गीकरण को अम्बेडकर के 'समानुपातिक प्रतिनिधित्व' के सिद्धांत के विस्तार के रूप में देखा जा रहा है।

निष्कर्ष (Conclusion):- सर्वोच्च न्यायालय का 1 अगस्त 2024 का ऐतिहासिक निर्णय भारतीय सामाजिक न्याय की यात्रा में एक मील का पत्थर है। यह निर्णय इस वास्तविकता को स्वीकार करता है कि 'अनुसूचित जाति' का समूह कोई सजातीय (Homogeneous) इकाई नहीं है, बल्कि इसके भीतर भी वंचना और पिछड़ेपन की अलग-अलग परतें मौजूद हैं।

शोध का निष्कर्ष यह स्पष्ट करता है कि:

- उप-वर्गीकरण केवल एक कानूनी प्रक्रिया नहीं, बल्कि 'अंतिम व्यक्ति' तक पहुँचने का एक नैतिक प्रयास है।
- हालाँकि, इसके राजनीतिक दुरुपयोग और दलित एकजुटता के खंडित होने की आशंकाएँ भी प्रबल हैं।
- न्यायालय ने राज्यों को शक्ति तो दी है, लेकिन साथ ही 'तार्किक डेटा' की शर्त रखकर मनमानी पर अंकुश भी लगाया है।

आगे की राह:- इस निर्णय के सफल और न्यायपूर्ण कार्यान्वयन के लिए निम्नलिखित कदम आवश्यक हैं:

- अनुभवजन्य डेटा का संग्रह (Collection of Empirical Data):** राज्यों को किसी भी उप-वर्गीकरण से पहले वैज्ञानिक और सांख्यिकीय आंकड़े जुटाने चाहिए। जैसा कि 'इंद्रा साहनी' और 'एम. नागराज' केस में कहा गया है, कोटा के भीतर कोटा का आधार केवल राजनीतिक लाभ नहीं, बल्कि सरकारी सेवाओं में 'अपर्याप्त प्रतिनिधित्व' का स्पष्ट प्रमाण होना चाहिए।
- निष्पक्ष आयोग का गठन (Constitution of Impartial Commissions):** उप-वर्गीकरण का निर्णय सीधे सरकारों द्वारा न लेकर विशेषज्ञों, समाजशास्त्रियों और सांख्यिकीविदों के एक उच्च-स्तरीय आयोग द्वारा लिया जाना चाहिए, ताकि इसमें पारदर्शिता बनी रहे।
- 'क्रीमी लेयर' पर गहन विमर्श (Deep Deliberation on Creamy Layer):** SC/ST में क्रीमी लेयर लागू करने का विचार जटिल है। इसे लागू करने से पहले यह देखना होगा कि क्या केवल आर्थिक संपन्नता से सामाजिक छुआछूत और भेदभाव खत्म हो जाता है? भावी नीति में केवल आय को नहीं, बल्कि 'सामाजिक प्रगति' को मापदंड बनाना चाहिए।
- केवल आरक्षण पर्याप्त नहीं (Beyond Reservation):** सामाजिक न्याय के पुनर्मूल्यांकन में यह भी शामिल होना चाहिए कि केवल सरकारी नौकरियों में कोटा पर्याप्त नहीं है। हाशिए पर खड़ी उप-जातियों के लिए विशेष शैक्षिक छात्रवृत्ति, कौशल विकास और उद्यमिता सहायता जैसे 'सकारात्मक कदम' (Affirmative Action) भी उठाने होंगे।
- राजनीतिक एवं सामाजिक संवाद (Political and Social Dialogue):** विभिन्न दलित उप-जातियों के बीच आपसी विश्वास पैदा करने के लिए एक व्यापक सामाजिक संवाद की आवश्यकता है, ताकि उप-वर्गीकरण 'जातीय संघर्ष' का कारण बनने के बजाय 'साझा विकास' का माध्यम बने।

अंततः, उप-वर्गीकरण का लक्ष्य डॉ. अम्बेडकर के उस स्वप्न को साकार करना होना चाहिए जिसमें समाज का सबसे पिछड़ा व्यक्ति भी राष्ट्र निर्माण में बराबर का भागीदार बन सके। यह केवल सीटों का बँटवारा नहीं, बल्कि 'न्याय का लोकतांत्रिकरण' है।

संदर्भ सूची:-

- स्टेट ऑफ पंजाब बनाम दर्विंदर सिंह, (2024) SCC Online SC 1856 (7-न्यायाधीशों की पीठ)।
- ई.वी. चिन्नैया बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, (2005) 1 SCC 394।
- इंद्रा साहनी बनाम भारत संघ (मंडल कमीशन केस), AIR 1993 SC 477।
- एम. नागराज बनाम भारत संघ, (2006) 8 SCC 212।
- जरनैल सिंह बनाम लक्ष्मी नारायण गुप्ता, (2018) 10 SCC 396।
- स्टेट ऑफ केरल बनाम एन.एम. थॉमस, (1976) 2 SCC 310।
- अखिल भारतीय शोषित कर्मचारी संघ (रेलवे) बनाम भारत संघ, (1981) 1 SCC 246।
- के.सी. वसंत कुमार बनाम कर्नाटक राज्य, AIR 1985 SC 1495।
- बी.के. पवित्रा बनाम भारत संघ (II), (2019) 16 SCC 129।
- जनहित अभियान बनाम भारत संघ (EWS आरक्षण केस), (2023) 5 SCC 11।
- भारत का संविधान (अनुच्छेद 14, 15, 16, 335, 338, 341 और 342-A)।
- काका कालेलकर आयोग की रिपोर्ट (प्रथम पिछड़ा वर्ग आयोग), 1955।
- बी.पी. मंडल आयोग की रिपोर्ट (द्वितीय पिछड़ा वर्ग आयोग), 1980।
- न्यायमूर्ति पी. रामचंद्र राजू आयोग की रिपोर्ट (आंध्र प्रदेश), 1997।

- 15) न्यायमूर्ति उषा मेहरा समिति की रिपोर्ट, 2008 (भारत सरकार)।
- 16) न्यायमूर्ति जी. रोहिणी आयोग (OBC उप-वर्गीकरण पर गठित)।
- 17) राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग (NCSC) की वार्षिक रिपोर्ट (2018-2023)।
- 18) भारत की जनगणना (Census of India) - 2011 के सांख्यिकीय आंकड़े।
- 19) लोकसभा वाद-विवाद (Constitution 127th Amendment Bill discussions)।
- 20) विधि आयोग (Law Commission of India) की प्रासंगिक रिपोर्टें।
- 21) अम्बेडकर, बी.आर. (1936), जाति का विनाश (Annihilation of Caste)।
- 22) अम्बेडकर, बी.आर. (1948), द अनटचेबल्स (The Untouchables)।
- 23) गैलांटर, मार्क (1984), Competing Equalities: Law and the Backward Classes in India, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
- 24) थोराट, सुखदेव (2009), Dalits in India: Search for a Common Destiny, सेज पब्लिकेशन्स।
- 25) जफरलॉट, क्रिस्टोफ़ (2003), India's Silent Revolution: The Rise of the Lower Castes in North India, सी. हर्स्ट एंड कंपनी।
- 26) गुरु, गोपाल (2009), Humiliation: Claims and Context, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
- 27) येनगड़े, सूरज (2019), Caste Matters, पेंगुइन बुक्स।
- 28) देसाई, आई.पी. (1984), Caste, Caste-Conflict and Reservations, अजंता पब्लिकेशन्स।
- 29) बट्टी नारायण (2011), The Making of the Dalit Public in North India, ऑक्सफोर्ड।
- 30) यादव, के.सी. (1994), India's Unequal Citizens: A Study of Other Backward Classes।
- 31) ओमवेट, गेल (1994), Dalits and the Democratic Revolution।
- 32) बायरन, टी.जे. (1996), The State and Development Planning in India।
- 33) कृष्णन, पी.एस. (2024), "Sub-categorisation of Scheduled Castes", The Hindu।
- 34) गोपाल, जी. मोहन (2024), "The Davinder Singh Judgment: A Critique", Economic and Political Weekly (EPW)।
- 35) मुस्तफा, फैजान (2024), "Quota within Quota: Legal Implications", Indian Express।
- 36) कुमार, विवेक (2014), "Internal Differentiation among Dalits", EPW।
- 37) चलाम, के.एस. (2007), "Caste and Economic Reforms", Mainstream Weekly।
- 38) देशपांडे, सतीश (2006), "Exclusive Inequalities: Merit, Caste and Class in Indian Higher Education", EPW।
- 39) "The Sub-classification Debate", संपादकीय, The Journal of Indian Law Institute (JILI)।
- 40) "Redefining Reservation", विशेष लेख, Frontline Magazine (अगस्त 2024 संस्करण)।
- 41) भारती, कँवल, दलित विमर्श की भूमिका, स्वराज प्रकाशन।
- 42) वाल्मीकि, ओमप्रकाश, दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, राधाकृष्ण प्रकाशन।
- 43) नारायण, बट्टी, बहुजन राजनीति और दलित पहचान, राजकमल प्रकाशन।
- 44) डॉ. धर्मवीर, दलित चिंतन, वाणी प्रकाशन।